अंतरा-शब्दशक्ति

कथा सेतु 6

(कथा संग्रह)

मीनाक्षी सुकुमारन

कथा सेतु

(कथा संग्रह)

मीनाक्षी सुकुमारन

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

वारासिवनी, मध्यप्रदेश

ISBN- 978-93-86666-59-8

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

मुख्य कार्यालय - १५ नेहरु चौक वारासिवनी, जिला बालाघाट (म.प्र) ४८१३३१

शाखा- एस-२०७, नवीन भवन, इंदौर प्रेस क्लब परिसर, इंदौर (म.प्र.) ४५२००१

दूरभाष- (कार्या.) ०७६३३-२५३१५९ (मो) ९४२४७६५२५९

अणुडाक- antrashabdshkti@gmail.com

अंतरताना- www.antrashabdshakti.com

प्रथम संस्करण २०१८- मीनाक्षी सुकुमारन

मूल्य - ५५.०० रुपये

आवरण चित्र- संदीप सोनी, वारासिवनी

मुद्रक- शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी

Katha Setu by Meenakshi Sukumarana

वैधानिक चेतावनी - इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकापी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम से अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुनरुत्पादित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा शब्द शक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई है अतः प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु लेखक जिम्मेदार है। प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र, भाषाशैली एवं स्थान सभी लेखक की कल्पना है। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

कथा सेतु

कथा सेतु एक प्रयास है मन के हाव भाव और आस पास यदा कदा घटित घटनाओं को कहने का लघुकथा व् संस्मरण के माध्यम से जो आपकी ज़िन्दगी को इस कदर प्रभावित करती हैं की आपके दिल पर आजीवन उनकी अमिट छाप रह जाती है। फिर चाहे वो कोई सुखद याद, घटना, हादसा, व्यक्ति या कोई आपबीती हो मन के भाव बरबस ही गुथ जाते हैं शब्दों के माध्यम से।

ऐसा ही प्रयास हमने भी किया है आप के दिल तक पहुँचने का इन कथानक पात्रों के ज़रिये जो ज़िन्दगी को आईना भी दिखा देते हैं, सुखद एहसास भी देते हैं और दर्द भी। आशा है "कथा सेतु" हमारे भाव और भावनाओं को कथानक के माध्यम से सेतु रूपी आपके दिल तक जोड़ पायेगा और आप सभी का स्नेह और आशीर्वाद मिलेगा इस पुस्तक को।

स्नेह अभिलाषी
मीनाक्षी सुकुमारन

अनुक्रमणिका

1. बदलती राहें 7
2. श्राद्ध 8
3. आस्था 8
4. मेहंदी 9
5. परवरिश 10
6. एहसास 10
7. हिन्दी दिवस 11
8. सूनापन 12
9. पैसे और रिश्तेदार 13
10. बहू 14
11. मज़हब 14
12. मजबूरियाँ 15
13. शांति की खोज 16
14. निराशा 17
15. दया 18
16. मातृशक्ति 19
17. रिश्तों का सच 20
18. नियति 22
19. अनकहा दर्द 22

20. गूढ़ मंत्र 23
21. करवाचौथ 24
22. सियासत 25
23. सीख बचपन की 26
24. एक व्रत ऐसा भी 27
25. शक 28
26. घाव दिल के 31
27. अस्मत 31
28. मेहनत 32

बदलती राहें

रोज़ रोज़ के वही ताने, वही शोर, वही नसीहतों का तनाव,वही दबावों का सिलसिला रीना में कुंठा,उदासी, टूटन और नीरसता भर रही थी। कई बार तो लगता वो जैसे पागल ही हो जाएगी और दिमाग की नसें फट जाएँगी।

आखिर ऐसा कौन सा गुनाह हो गया अगर शादी नहीं हुई, मुझे तो कभी शादी करनी भी नहीं थी फिर क्यों हर अपना,हर बेगाना मेरे पीछे हाथ धो के पड़ा है। मेरे अलावा किसी के पास कोई काम नहीं है क्या ... ये सोच सोच रीना अक्सर आँसूओं की तन्हाई में डूब जाती। कहे भी तो किस से कहे अपने दिल की पीर, कोई मन: स्तिथि समझने को तैयार ही न था...क्या दोस्त, क्या रिश्तेदार, क्या आस पड़ोस यहां तक की खुद के माता पिता।

रीना इस भीड़ में बिल्कुल तन्हा सी हो गयी थी और सब कुछ बेमन नीरस सा हो गया था, किसी भी चीज़ में उसका मन न लगता। यहाँ तक की उसकी मनपसंद चीज़े लिखना, पेंटिग करना, मनपसंद गीतों को सुनना, गुनगुनाना सब भी उस से दूर होने लगे थे।

ये सिलसिला एक दिन, एक हफ्ता,एक महीने, एक साल बल्कि कई सालों चलता चला गया जब तक रीना ने ठान नहीं लिया "अब सब बहुत हुआ" और बदलती तकदीर, बदलती राहें बाहें पसारे उस का स्वागत कर रही थीं एक साथी के रुप में जिसने उसे फिर जीना सिखाया, उसके रंगों से रूबरू करा खिलना, महकना सिखाया और प्यार से संवार रीना को एक नया जीवन,नई पहचान दी।

श्राद्ध

आज सुबह से ही जिया बेहद ही विचलित थी और ये सिलसिला हर साल का ही था जब भी ये श्राद्ध का दिन आता था। लम्बी चौड़ी प्रक्रिया, दान,दक्षिणा, भोजन आदि। ऐसा नहीं की वो नास्तिक थी, या रीति रिवाजों के खिलाफ पर उसका दिल और दिमाग ये नहीं समझ पाता था की जो लोग आपके सामने हैं उनका आप निरादर करते रहो, उन्हें कुछ समझो नहीं और जो इंसान जीवित नहीं उसके के लिये श्राद्ध के नाम पर इतना सब-लोगों को आलिशान खाना, ब्राह्मणों को इतना दान दक्षिणा, लंबा चौड़ा हवनआदि काअनिवार्य है। ये दिखावा क्या सचमुच आत्मा की शांति के लिये है ?या अपने निजी स्वार्थ के लिये जिया अपने और मासूम बच्चों को देख सोचती ही रहती पर जवाब साल दर नहीं मिल पाया और बेमन से शामिल होना ही पड़ता है इस आडम्बर में अपने पति की खातिर।

आस्था

कितना संस्कारी है, कितना भला इंसान है और कितनी आस्था है इसकी ईश्वर में कोई मौसम हो, बरसात, सर्दी, गर्मी ये मन्दिर आना नहीं चुकता "सभी पंडित जी का एक ही स्वर था रवि के लिये"। अंजान इस बात से यही संस्कारी, भला, आस्थावान रवि रात में कैसा जानवर होता है जो सिर्फ काजल या घर की चार दीवारें ही जानती थीं। बिन नागे शराब में धूत, गाली-गलोच, मार-पीट, काजल के साथ दुर्व्यवहार मानो रोज़ ही का नियम था। और हर सुबह उजले सफेद कुरते पजामे में सब दफन आस्था की आड़ में।

मेहंदी

बचपन से मेहंदी की महक और उसका सुर्ख लाल रंग जिया को बेहद ही भाता था। वो जब भी माँ की हथेली में गाड़े लाल रंग की मेहंदी देखती तो बस देखती ही रहती और आसपास गूँजता महिलाओं का स्वर भी उसके कानों में पड़ ही जाता,जिसकी मेहंदी यूँ लाल रचती है उसकी सास उसे बहुत प्यार करती है और जिया भोलेपन से हँस दिया करती "माँ की तो सास ही नहीं है"। कोई कहता की उसका पति उसे बहुत प्यार करता है "तब जिया गंभीर हो जाती और सहम जाती"।गाली गलौच,हाथ उठाना, कलह मानो आये दिन की दिनचर्या हो और ये प्यार तो हरगीज़ नहीं जिया का बाल मन भी जानता था।

कुछ सालों बाद जब फिर करवा चौथ का व्रत आया जिया ने भी हाथ पे मेहंदी लगाने की जिद की और सूखने के बाद माँ की वही लाल सुर्ख और जिया की फीकी सी। सभी औरतें जहां हँसी ठिठोली कर रही थीं "जिया तेरी मेहंदी तो फीकी है पति प्यार नहीं करेगा"। पर जिया मन ही मन खुश थी ये सोच जब लाल सुर्ख मेहंदी का माँ को कोई प्यार नहीं मिला शायद फीकी मेहंदी वो प्यार दिला दे।

परवरिश

जीवन की अर्धशतकीय पारी खेल चुका रोहित का मन अक्सर भर जाया करता,जब तक साँसे हैं मुझे तो काम करना ही पड़ेगा "मैं कभी रिटायर नहीं हो सकता"। 12 साल की उम्र में जब बच्चों के हाथों में किताबें, आँखों में सपने होते हैं मुझे सब्ज़ी वाले के पास लगा दिया गया। वही तराज़ू मेरे जीवन की खुशियों को आज तक तोल रहा है कभी एक पलड़ा भारी कभी दूसरा, सामान्य जीवन तो कभी हुआ ही नहीं। वक्त और उम्र के साथ नौकरी और जगह बस बदलती रही नहीं बदला तो नसीब और जीवन जो मुझे विरासत में बतौर परवरिश मिला था।

एहसास

कभी तो अपना गिला तोलिया बिस्तर से उठा लिया करो, कभी तो अपने कपड़े सही जगह पर रख दिया करो, कभी तो डिब्बे का ढकन पूरी तरह बंद किया करो, कभी तो अपने जूते, चप्पल ड्राइंग रूम से उठा दिया करो, कभी तो मेरे दिल की बात समझा करो, कभी तो मेरी भी साइड लिया करो हमेशा आप गैरों को ही सही समझते हो......इस तरह न जाने कितनी ही बार रीमा और उसके पति में नोंक झोंक हुआ करती थी। पर अचानक एक ही खबर ने की पति की ट्रांसफर हो रही है ने एक सन्नाटा ही भर दी दोनों के जीवन में रह गयी बस तो टीस जीवन की छोटी छोटी तकरार भरी प्यार भरी ख़्वाशियों की जिसका एहसास नज़रों से दूर होने पर ही हुआ दोनों को।

हिन्दी दिवस

बच्चों हिन्दी दिवस आने वाला है, बताओ इसे एक यादगार दिन बनाने लिये क्या किया जाए।
रवि: मैम वैलेंटाइन डे जैसे हिन्दी डे पर गुलाब और केक लाते हैं।
हेमंत : हिन्दी डे नहीं हिन्दी दिवस
रवि: what ever एक ही बात है।
हेमंत: नहीं दोस्त एक बात नहीं।ये कोई वैलेंटाइन डे, मदर्स डे, फादर्स डे नहीं ये हिन्दी दिवस की बात हो रही है।
रवि: अच्छा अब तुम हमें बताओगे की क्या सही है क्या गलत। अपनी दकियानूसी सोच अपने पास रखो।
बाबा आदम के ज़माने के प्राणी।
हेंमत : चुप रहने में ही भलाई है, भैंस के आगे बिन बजाने से क्या फायदा।
रवि: how dare u call me भैंस
अध्यापक: दोनों का बचाव करते हुए डांटते हुए बोलीं आप दोनों चुप हो जाएं।

हिन्दी दिवस कोई औपचारिक दिवस, त्योहार या मौज मस्ती नहीं। ये एक चेतना है जिस से आपको हिन्दी भाषा के प्रति रुझान हो, उस से लगाव और आप उसकी अहमियत को समझ सकें। जैसे किसी भी व्यक्ति के लिये उसकी माँ की अहमियत,उसकी पहचान, उसका साथ बेहद जरूरी है उसी तरह हर इंसान को अपनी मातृभाषा हिन्दी से भी उतना ही प्रेम होना चाहिए। आप किसी भी प्रांत, सभ्यता, जाति के हों हिन्दी हमारी पहचान है जो आधुनिकरण के चलते लुप्त हो रही है।

इसी लिये हिन्दी दिवस एक दिव्य ज्योति है जिस का प्रकाश जन जन तक फैलाना है।

सभी बच्चे शांत, सुन्न,एकटक अपनी अध्यपिका को देख सुन रहे थे और सोच रहे थे सिर्फ एक ही दिन, या हफ्ता भर, महीना भर ही क्यों "हिन्दी दिवस", जब हम दिल से इस भाषा को अपना लें तो अलग से एक दिवस मनाने की ज़रूरत ही नहीं पड़ेगी।

अध्यपिका भी मन ही मन खुश थीं की उनका संदेश सही मायनों में बच्चों के दिलों तक पहुंच गया था।

सूनापन

जहाँ तक नज़र जाए गगनचुंबी इमारतें, एक से एक आलीशान अपार्टमेंट्स, वैभवशाली मॉल, दौड़ती मैट्रो, ऑटो, छोटी से बड़ी गाड़ियाँ ....ये सब देख अदेहड़ सीमा न सिर्फ अचंभित थी बल्कि काफी घबरा सी ही गई थी इतनी भीड़, इतनी गहमा गहमी, हर कोई बस दौड़ ही रहा है।

तभी रवि की आवाज़ से उसकी तंद्रा टूटी "अम्मा घर आ गया"। सीमा ने चश्मे से झाँकती धुंदली आँखों से देखा तो 20 मंजिला इमारत देख मानो सिर ही चकरा गया। डरते हुए कार से बाहर कदम तो रखा,फिर लिफ्ट से 15 मंजिल बेटा का हाथ थाम पहुँची। इतना बड़ा घर पांच कमरे, रसोई वगेरा देख सीमा बोली "रवि इतना बड़ा घर तुम तीन लोगों के लिये"। तुझे याद नहीं हम कितने जन दो कमरों में हँसी खुशी रहते थे।

हाँ अम्मा याद है पर अब न वो घर हैं, न वो लोग, न मेल मिलाप, न दिलों में प्यार, बस एक बनावट है, अकेलापन और खालीपन।

सीमा ने मन ही मन भाँप लिया इतने बड़े शहर, बड़े घर में कितना सूनापन था जो शायद हर घर की ही कहानी थी।

पैसे और रिश्तेदार

किराये का घर में एक कमरा,एक रसोई, एक बेटी करीबन 7से 8 साल की, एक बेटा जो कुछ ही महीनों का था, काजल और उसके पति हँसी खुशी अपना गृहस्थ जीवन बिता रहे थे। पर ये बात रिश्तेदारों को अक्सरअखरती "भला एक कमरे में कोई कैसे जी सकता है" और यही सोच वह लोग कनी काटते रहते उन से। वक्त बीत रहा था अपनी गति से और कुछ ही सालों के पश्चात उन्होंने अपना मकान ले लिया जिस में काफी काम करवाना था पर दोनों ने अपनी सारी जमा पूंजी घर लेने में लगा दी थी, इसलिए बस जैसे तैसे गुज़ारा करते रहे। अपना घर था उसका सबसे बड़ा सुकून था काजल और उसके पति को। पर रिश्तेदारों की आंखों की किरकिरी अभी भी थे। "इतना पैसा खर्च कर कोई ढंग का घर लेते जहाँ इंसान चार दिन आराम से रह तो सके"।

समय पंख लगा उड़ रहा था बेटी कॉलेज में और बेटा दसवीं के पेपर दे चुका था जब काजल के पति ने मकान को तोड़ नए सिरे से बनवाने का विचार किया। साल भर से कुछ समय ज़्यादा में दो मंजिला मकान बन कर तैयार था और पर कुछ काम रह गया था जो उन्होंने सोचा समय समय पर करवाते रहेंगे जैसे जैसे हाथ में पैसे होंगे। रिश्तेदारों की सुई तो अभी भी वहीं अटकी थी "भई घर खड़ा करना ही सब कुछ नहीं होता, कुछ स्टैण्डर्ड भी होना चाहिए"। काजल और उसके पति जिन्होंने हमेशा अपनी चादर देख ही पैर फैलाये और सूझ बूझ से हर काम करते थे उसी का फल था जो आज इस मकाम पर थे। अगर दिखावे पर जाते तो उधार, एहसान या फिर कर्ज़ में ही डूबे होते जो दोनों को ही गंवारा न था। अपनी मेहनत और सूझ बूझ से ही आगे बढ़ते रहे और रिश्तेदारों को कभी भी न अपने पर न अपने जीवन पर हावी होने दिया क्योंकि सच्चे रिश्ते कभी भी पैसे, दिखावे और रिश्तेदारों के मोहताज़ नहीं होते और काजल की सच्ची दौलत उसके बच्चे, पति और अपना घर थे जिसपर किसी की मोहर की कभी भी कोई ज़रूरत नहीं थी और न ही आज भी है।

बहू

जैसे ही विवाह की सभी विधियां खत्म हुईं सास ने आकर अपने बेटे का माथा चूम सिर पर हाथ फेरा बहू बिना रिया को नज़र अंदाज़ करती हुई। अजीब और अनमना सा तो लगा पर तभी पति ने हल्के से हाथ दबा सहज होने का इशारा किया।मेहमानों,रिश्तेदारों की गहमा गहमी विवाह की पूरी रस्मों के बाद भी रिया को सास का रवैया समझ नहीं आया। पति का स्नेह और पूरा साथ तो था पर पहली नज़र से ही जो बात खटक रही थी वो था सास का रूखा रवैया। कुछ दिन,महीने साल दर साल बीत गये पर रिया जिस प्यार,सम्मान की हकदार थी वो उसे कभी न मिल पाया।सिर्फ इसलिए क्योंकि रिया उनकी अपनी जाति धर्म की नहीं थी और ये कसूर उसके हर गुण, स्वभाव,त्याग पर सदा ही भारी रहा और आज भी है।

मज़हब

अक्सर जब भी साई बाबा के मंदिर रिया जाया करती उसने कई बार देखा काले चने और ब्रेड का प्रसाद लोग बाँट रहे होते। एक दिन उसका भी मन चाहा और पति से पूछ उसने भी बड़े चाव से अच्छे से काले चने बनाये और ब्रेड ली और बड़े दिल से मंदिर जाने की तैयारी की। जब जाने लगे पति ने सास को भी साथ ले लिया। अब ले ही लिया तो जिया क्या करती पर वो अपनी खुशी को खराब नहीं करना चाह रही थी इसलिए चुप ही रही। मंदिर पहुंच भोग लगाने के पश्चात अब बारी थी प्रसाद बाँटने की। लोग धक्का मुक्की कर रहे थे जिस में बुजुर्ग, महिलाएं, बच्चे भी थे। अचानक से रिया की सास बच्चों को धक्का देने लगी 'हट हट' कह कर इसी बात का अंदेशा था रिया को क्योंकि उनके स्वभाव से भली भांति परिचित थी।

वो जानती ही नहीं थी किसी भी मज़हब /आस्था से बड़ी इंसानियत का जज़्बा होता है जिसमें प्यार और दया हो। प्रसाद बाँट उसने अपनी सास के रवैये के लिये ईश्वर से माफी मांगी और भारी मन से घर आ गयी।

मजबूरियाँ

रवि और रागिनी कितने खुश थे सदा के लिए एक दूसरे के होकर। अभी रागिनी के हाथों की मेहंदी हल्की भी नहीं हुई थी की सास ने अपने रंग दिखाने शुरू कर दिये और नियमों की सूची थमा दी। रागिनी को ये तो पता था की विपरीत परिवेश में जहां खान पान, भाषा से लेकर रीति रिवाज़ सब अलग होंगे पर ये अंदाज़ा नहीं था परिवार में सिवाय रवि के उसे किसी का साथ नहीं मिलेगा। इस तरह हर दिन कोई नई चुनौती सामने होती और सब की पैनी नज़रें कोई कोई न कोई गलती ढूढ़ने में लगी रहती पर रागिनी द्वारा कोई मौका न मिलने पर उनकी खीज बढ़ने लगी और वो सब नए नए पैंतरे आज़माने लगे जिस से घर में कलह हो और दोनों का रिश्ता आहत हो। अब ये बात रागिनी को हरगीज़ बर्दाश्त नहीं थी की उसके प्यार भरे रिश्ते पर कोई भी आंच आये, करे तो क्या रवि को तो अपनी माँ और भाइयों पर अंधा विश्वास था इस के चलते रागिनी की बात वह क्या सुनेगा यही सोच रागिनी की मजबूरियाँ उसे अंदर ही अंदर तोड़ रही थी जिस कारण मानसिक दबाव बढ़ने से उसकी तबियत खराब रहने लगी और वह डिप्रेशन, हाई बी.पी, भूख न लगना, कमज़ोरी आदि कई रोगों से ग्रस्त हो गई।

अब ये रागिनी की हार थी और रवि के अलावा सबकी जीत। कुछ समय बेहद ही मुश्किल बिता फिर एक दिन जब वो आँखें मूंद लेटी हुई थी उसे अपने गालों पर आँसूओं की तपिश महसूस हुई और उसने पाया रवि उसका हाथ थामे बुरी तरह रो रहा था बोलते हुए"मुझे माफ़ कर दो रागिनी मैं ही जिम्मेदार हूँ तुम्हारी इस हालत का, क्यों अपने साथ मैंने तुम्हारी ज़िन्दगी भी इस नर्क में डाल दी, मुझे पता है सब, सब जानता हूँ पर कभी कुछ कह नहीं पाया, मुझे माफ़ कर दो, मेरी इसी कमज़ोरी का मेरा परिवार फायदा उठाता है, मैं तुम्हारा गुनहगार हूँ, मुझे माफ़ कर दो"। रागिनी उठी और रवि को गले लगा चुप कराया और वादा किया "मैं तुम्हारी ढाल बनूँगी कमज़ोरी नहीं"। कुछ ही दिनों में उसकी सेहत सुधरने लगी और रागिनी तैयार थी रवि की जीवन संगिनी बन हर मजबूरी को हराने के लिए।

शांति की खोज

काजल और उसके पति का साथ करीबन 75 साल का था। न जाने कितने उतार चढ़ाव, अच्छे बुरे, दुःख सुख के पल उन्होंने साथ देखे थे और हर परिस्थिति का सामना मिलकर ही किया।

काजल का यूँ तो भरा पूरा परिवार था तीन बेटे दो बेटियाँ और कमाने वाले सिर्फ काजल के पति फिर भी उन्होंने अपने बच्चों की पढ़ाई,उनके लालन पालन में कोई भी कसर नहीं छोड़ी। वक्त अपनी रफ्तार से चलता रहा और पाँचों बच्चे अपनी अपनी ज़िन्दगी में कामयाब अपने परिवारों में रमे थे।

काजल के पति रिटायर हो चुके थे अब दोनों अकेले अपनी घर गृहस्थी के साथ। बेटियाँ अपने पति और बच्चों के साथ और बेटे अपनी बहुओं और बच्चों के साथ।

अब न वो उम्र रही न सेहत न उमंग जीवन की हर ज़िम्मेदारी को बखूबी निभाते हुए जीवन के सब रंग मानो बहुत पीछे छूट गए थे और मन की शांति की खोज अभी भी बाकी थी

जो शायद मृत्यु शैय्या पर ही मिल पाए इसी आस में अपना वृद्ध जीवन दोनों बिता रहे थे एक दूसरे के पूरक बन के।

निराशा

आज हॉस्पिटल के बिस्तर पर लेटे हुए आधा महीना बित चुका है, क्या मैं ठीक भी हो पाऊँगी, मीना खीझते हुए बोली। कितने ही टेस्ट हो चुके हैं, दवा, इंजेक्शन,ऑक्सीजन आखिर ये सिलसिला कब तक चलेगा। मैं हार चुकी हूँ अब और बर्दाश नहीं होता।

हौंसला बंधाते हुए पति ने प्यार से हाथ थाम लिया और बोला ऐसे कैसे हार जाओगी मैं हारने दूँगा तब न।

मीना ने हाथ खींच लिया और निराश मन से मुँह फेर लिया।

तभी नर्स आयी और बोली "टेस्ट के लिए मैम को लेकर जाना होगा"। तभी मीना चिल्ला कर बोली मुझे और कोई टेस्ट नहीं करवाना बस आप घर भेज दीजिये मुझे।

पति ने नर्स को इशारा किया जाने का और किसी तरह बहला फुसला कर राज़ी कर ही लिया मीना को और बैल बजा कर नर्स को बुलवाया और वार्ड बाय व्हीलचेयर ले आया।

पति, नर्स, वार्ड बाय मीना के साथ साथ चल रहे थे तभी मीना की नज़र एक मरीज़ पर पड़ी जिसके दोनों हाथ, दोनों पैर नहीं थे फिर भी चेहरे पर कोई निराशा के भाव नहीं वह वार्ड बॉय और नर्स के साथ हँसी ठिठोली कर रहा था जैसे जीवन से उसे कोई गिला ही न हो।

मीना ठिठक गई और सोचने लगी "मैं बस इतने में ही टूट कर हार मान बैठी हूँ"। पति की ओर देखा और उनका हाथ थाम लिया।

टेस्ट के पश्चात जब रूम में पहुँची तो रह रह के वो जिंदादिल चेहरा उसके सामने घूम रहा था। नियति भी कैसे कैसे खेल खेलती है तभी पति ने पूछा क्या हुआ, क्या सोच रही हो?

मीना ने सिर हिलाते हुए कह तो दिया कुछ नहीं पर एक अजीब सा साहस सा मिल रहा था मन और तन दोनों को उसे निराशा से उभरने का और जल्द ठीक हो अपने घर जाने का।

दया

स्त्री होकर भी न कोई दया भाव न ही किसी के दर्द से कोई वास्ता, न ही स्त्री जैसे कोमल भाव। आखिर किस बात का इतना घमंड था, इतना रूखा व्यवहार उसकी सास में रमा अक्सर ही सोचती रहती पर कोई उत्तर कभी न मिल पाता।

उसे लगा शायद वक्त रहते उनके व्यवहार में फर्क पड़ेगा पर नहीं ऐसा कभी नहीं हुआ।

रमा माँ बनने वाली थी पर प्रेग्नेंसी में काफी तकलीफ होती अक्सर उसे बेड रेस्ट, नियमित टेस्ट आदि के लिये कहा जाता पर उसकी सास की बेरुखी का रवैया त्यों का त्यों था। जिस वक्त रमा को सबसे ज़्यादा ध्यान,साथ और सहारे की ज़रूरत थी वो स्त्री होकर भी दया न कर पाईं जिसे से रमा बहुत दुखी होती।

सातवें महीने में रमा की हालत इतनी नाजुक हो गयी की उसे हस्पताल में भर्ती करना पड़ा और पूरा माह आठवें महीने तक उसे अपनी निगरानी में वहीं रखा। हालत कभी सुधरती कभी खराब होती, एक आँख मिचौली सी चल रही थी ज़िन्दगी और मौत में। इंतहा थी कठोर हृदय की इस दौरान उसकी सास एक बार भी हॉस्पिटल नहीं आईं। रमा के साथ उसकी माँ ही रहतीं और बाकी की भाग दौड़ पति और भाई ही करते। दर्द,कराहट, इंजेक्शन, ऑक्सीजन, टेस्ट की पीड़ा में भी रमा अपने सवाल का हल खोजती रहती"कोई इतना भी निर्दयी कैसे हो सकता है,वो भी एक औरत होकर"।

मातृशक्ति

रीना को दिन पर दिन यूँ रोज़ टूटते हुए देख माँ भीतर तक सिहर जाती पर अपने अटल विश्वास रूपी हौंसले को कभी डगमगाने न दिया।

उसे यकीन था आज नहीं तो कल रीना भी इस भय की स्थिति से उभर ही जाएगी। पर दिन पर दिन रीना कमज़ोर होती जा रही थी शारिरिक और मानसिक पीड़ा दोनों के चलते जीने की चाह को जैसे उसने त्याग ही दिया था। पर माँ कैसे यूँ देखती रीना को टूटते,बिखरते और मायूस।

माँ उसका हाथ थाम कमरे से बाहर लाई और दिखाया कैसे हर कोई अपने हालात से लड़ कर भी जी रहा था..किसी का हाथ नहीं,किसी का पैर,किसी की आँख, किसी के बोलने की शक्ति,किसी के सुनने की,किसी को दिल का रोग....रीना कांप उठी और भाग कर हस्पताल के कमरे में आ गई और बेसुध सी लेट गई और सोचने लगी मेरे पास तो सब है फिर क्यों जीवन से हार मान बैठी और माँ चुपके से उसमें अंकुरित होते साहस को डब दबायी देखती रही हल्की सी मुस्कान के साथ।

रिश्तों का सच

बचपन से ही प्रायः माँ ने जैसे घुटी सी पिला दी थी मीना को की अपनों से बड़ों का सदा ही सम्मान करना चाहिये, उनकी कोई बात अच्छी न भी लगे तो चुप रहते हैं। पर मीना का मन कभी न समझ पाता न ही मान पाता। वो अक्सर जब देखती माँ कभी भी किसी बात को विरोध ही नहीं करती थी, हमेशा चुप ही रहती चाहे वो अपने पति की कोई बात हो, किसी करीबी रिश्तेदार की या आस पड़ोस में।

माँ का ये व्यवहार मीना के गले नहीं उतरता था और समय के साथ जैसे जैसे उम्र बढ़ने लगी उसका मन विद्रोह और रोष की अग्नि में जलने लगा। आखिर क्यों चुपचाप सहना, क्यों हक नहीं अपना मत, अपनी बात कहने का, इंसान हैं कोई मूक पशु थोड़ा ही जो खूंटे से बंधे बस कराहते रहें।

वो अक्सर ये बात माँ से भी कहती और माँ बस प्यार से गाल सहला देती "अभी वक़्त लगा समझने में तुम्हें"। और मीना विफर उठती माँ ये क्या बात हुई जो गलत है वो गलत ही है न, चुप रहने से सही हो जाएगा क्या? पर माँ के साथ मीना की कोई दलील कभी काम न आती।

देखते ही देखते उम्र बढ़ रही थी और वहीं लोगों की आवाज़ें "अरे भई सारी उम्र घर बिठा कर रखना है क्या" और मीना चिढ़ सी जाती अपने ही घर में थी न उन लोगों के तो नहीं। हर दूसरे से दिन कोई न कोई अपना तर्क, अपना नुस्खा, अपना टोटका लेकर घर चला आता मानो सारा जहां पीछे ही पढ़ गया था मीना के और जब माँ मीना के चेहरे पर गुस्से की लकीरें देखती वो आँखों से इशारा कर शांत कर देती और इस तरह उसका विद्रोह ज्वालामुखी बनता जा रहा था और अंदर ही अंदर बहुत तकलीफ दे रहा था।

एक दिन आखिर वही हुआ जिसका डर था। राखी का दिन था मीना काफी उत्सुक थी अपना नया सूट, मैचिंग चूड़ियाँ, हाथों में मेहंदी खूब खुश थी और माँ की भी पूरी मदद कर रही थी रसोई में। सब ठीक चल रहा था राखी बांधी, नाश्ता परोसा और चाय वगेरा सब अच्छे से निपट गयी। और तभी हर साल की तरह उसकी भुआ ने शादी की बात शुरू कर दी, पिता भी उनके सुर में सुर मिलाते शुरू हो गये। भुआ जी और उनके पति, मीना के पिता की बातें मीना को विचलित कर रही थीं " हर चीज़ वक़्त, नियम के साथ अच्छी लगती है, दिन त्योहार पर बेटियाँ अपने

ससुराल से आती ही अच्छी लगती हैं", "इतनी उम्र में तो खट्टा खाना पड़ेगा जो भी रिश्ता मिले समझौता करना पड़ेगा" "चाहो कोई तलाकशुदा हो या बाल बच्चे वाला" अब सोचने,समझने और खोजने का समय गया। घन्टे भर से ज़्यादा हो चुका था मीना को हर साल, हर त्योहार की तरह सुनते हुए सब "तभी सबकी उपेक्षा के विपरीत मीना विफर उठी -क्या हर त्योहार पर दिल दुखाना ज़रूरी है, एक ही बात बार बार हर बार कह कर जताना ज़रूरी है, और जो जो मीना के दिल में था वी रोते रोते कहती चली गयी जब तक उसके गालों पर ज़ोर ज़ोर से माँ ने न जाने कितने चांटे जड़ दिए और मीना को खींच कर ले जा कमरे में बंद कर दिया।

मीना माँ के इस व्यवहार से अचंभित थी और रो रो के बेहाल थी। उतना दर्द उसे मार का नहीं हो रहा था जितना खोखले रिश्तों की सच्चाई पर अपनी माँ ने दूसरों के लिये इतना मारा और अपने पिता के मुँह से एक लफ्ज़ भी नहीं निकला और न ही किसी और के। क्या सच में इस कड़वे व्यवहार की हकदार थी मीना ? क्या कुसूर था उसका? रो रो के यूँ पूरा दिन बिता न कुछ खाया, न पिया, हाथों की मेहंदी, रंग बिरंगी चूड़ियाँ भी जैसे उपहास उड़ा रही थीं। इस पूरे प्रकरण से सबसे ज़्यादा मन टूटा तो वो अपने माँ के व्यवहार से वो तो उसकी अपनी थी फिर भी मीना की पीड़ा समझ न पाई और सबके सामने यूँ सज़ा दी "क्या गलत कहा था उसने" सोचते सोचते रोते रोते यूँ पूरा दिन उस कमरे में बंद बित गया। सब बाहर सामान्य थे कोई टूटा था, बिखरा था उस दिन तो सिर्फ "मीना"।

आज इस घटना को 20 साल से ऊपर हो चुके फिर भी हर साल मीना अपने पति और बेटे के साथ राखी पर अपने मायके जाती है तो वो ज़ख्म खुद बखुद हरे हो जाते हैं जिसके घाव उसके दिल और गाल पर सदा ही कचोटते हैं गहरे भीतर ही भीतर रिश्तों की दुहाई देते जिनका रंग रूप इतना भयावह भी हो सकता है मीना ने उस दिन जाना था।

नियति

गुरुद्वारे में भोग कीर्तन चल रहा था और कोने में गोद में बच्चे के लिये रीना चुपचाप गुमसुम बैठी हुई थी। हर निगाह में उसके लिए सांत्वना के साथ दया भरी हुई थी। हर जुबां पे एक ही बात इतनी छोटी उम्र में नियति का ये कैसा खेल की पति को उस से छीन लिया। कैसे खुद को और दुधमुंही बच्ची को संभालेगी। भोग कीर्तन खत्म हुआ सब एक एक कर रीना के सिर पर हाथ रख विदा होने लगे तभी गोद में बच्ची बिलखने लगी और सबको हाथ जोड़ रीना एक कोने में बैठ उसे दूध पिलाने लगी। अब इसके लिए ही जीना है मुझे नियति से उभर कर कह उसके सिर पर हाथ फेरने लगी मानो खुद से ही कोई वादा कर लिया हो आँखों के आँसू पोंछ।

अनकहा दर्द

जब से होश संभाला था और रोहन को आसपास होने वाली चीज़ें कुछ कुछ समझ आने लगी थीं, उसे माँ का अनकहा दर्द भी समझ आने लगा था। माँ क्यों इतनी उदास, खोई खोई सी, चुप चुप सी और आये दिन क्यों बीमार रहती है। कितने सालों से वो खुद में ही ये दर्द छिपाए थी पर चाह कर भी बहते आँसूओं को रोक न पाती।

आज भी एक और दिन ऐसा ही था जब रोहन ने माँ से लाड़ करते हुए खाना खाने को कहा" माँ ने भरे स्वर में टाल दिया मुझे भूख नहीं तुम खा लो"पर रोहन की और देखा तक नहीं। रोहन समझ गया माँ फिर किसी बात को लेकर परेशान और चिन्ता में थी। रोहन भी कहीं न कहीं अंतर तक माँ को यूँ देख देख टूट चुका था। उसने भी आपा खोते हुए आज कह ही दिया " माँ जब तुम इस रिश्ते से इतनी दुखी,परेशान हो छोड़ क्यों नहीं देती"। माँ विफर उठी तुझे पता भी है तलाक के बाद एक औरत की ज़िन्दगी क्या हो जाती है। रोहन बोल पड़ा इस से तो अच्छी होगी। माँ ने रोहन को चुप होने का इशारा कर फूट फूट रोने लगी और रोहन उदास सा माँ को ताकता रहा सोच सोच "आखिर बुराई ही क्या है तलाक में" रोज़ रोज़ के यूँ मरने से।

गूढ़ मंत्र

ये तो रोज़ की ही चिक चिक है हमारी ज़िन्दगी की टीना गुस्से में तमतमाती हुई बोली। विजय भी तुरंत पलट के लिये मैं भी क्या करूँ कहाँ जाऊँ इन लोन के बोझ से मुक्त होने को? टीना क्यों लिए फिर इतने लोन दो दो घरों का, कार का,क्रेडिट कार्ड ज़िन्दगी को जंजाल बना रखा है। भुगतना तो हमें ही पड़ रहा है न इस बोझ के तले। विजय भी रुआंसा सा होकर मुझे भी पीछे से सब विरासत मिला होता तो ये नौबत भी नहीं आती। मुझे पता है न मैं खुद कैसे जी रहा हूँ रोज़ मर मर के। टीना को उस वक्त बचपन में कही बात अनायास ही याद आ गयी "तुम्हारे पास 10 रुपये हैं तो पाँच ही खर्च करो पाँच आगे की ज़रूरत के लिये बचा कर रखो"। ये गूढ़ मंत्र तुम्हें जीवन में कभी भी हारने नहीं देगा। पिता की बात में कितनी गहराई थी आज टीना को समझ आ गया था विजय की दयनीय स्थिति देख जो न चाहते हुए भी कर्ज़ रूपी लोन की दलदल में धस्ता चला जा रहा था और भेंट चढ़ रही थी घर की खुशियां, सुख,शांति।

करवाचौथ

करवाचौथ बस आने ही वाला है सोच सोच मीना का दिल बैठा जा रहा था। न हर साल की तरह कोई उत्साह था न उल्लास नया सूट लेने का, नई चूड़ियाँ, मेहंदी न ही किसी और चीज़ का। बस एक उदासी से उसके मन को घेरे थी कैसे रख पाएगी वो व्रत इस बीमारी में इतनी कमज़ोरी, इतनी दवाईयां, और सभी ने सख्त हिदायत दे दी थी "इस बार व्रत नहीं रखना है"। पर मीना का शरीर भले ही बेहद कमज़ोर था पर मन नहीं मान रहा था। उसने किसी से कुछ भी कहा नहीं और हिम्मत कर शगुन के तौर पर थोड़ी सी मेहंदी लगवा ली पति ने फिर ज़ोर दिया 'मीना कोई व्रत नहीं इस बार, ठीक हो जाओ फिर अगली बार रख लेना"। अगले दिन सुबह न सरगी ली न ही चाय बस चुपचाप लेटी रही, पति ने कई बार चाय को पूछा "अभी मन नहीं कह कर टालती रही"। इस तरह आधा दिन बीतने को था पति ने कुछ खा कर दवाई लेने को कहा तो भी मीना "लेती हूँ अभी थोड़ी देर में" कह कोई न कोई बहाना कर टालती ही रही। कभी सो जाती बीच बीच में। इस तरह किसी तरह पूरा दिन निकाल ही लिया। शाम होते होते पति समझ ही गये और कहा "अब तो पूरा दिन बीत गया, कर ली न अपनी मन मानी,रख लिया न व्रत" अब तो कुछ ले लो तबियत बिगड़ जाएगी। मीना ने मनुहार करते हुए कहा बस थोड़ी देर और एक बार चाँद निकल आये, फिर प्लीज़ जो कहोगे सुन लूँगी।

रात 9 बजे के बाद चाँद को अर्ध दे मीना ने पति के हाथ पानी पी व्रत खोला और खुश थी की मन हार नहीं पाया कमज़ोर शरीर के आगे।और पति ने भी प्यार से सिर पर हाथ फेरते हुए कहा "बिल्कुल पागल हो तुम,जान है नहीं मैडम को फिर भी व्रत रखना ही था" तुम औरतें भी कमाल ही हो कह गले से लगा लिया
और मीना भी प्यार से बाहों में समा गई खुशी खुशी आखिर रख ही लिया था करवाचौथ का व्रत उसने अपने मन से कमज़ोर तन को हरा के।

सियासत

स्कूल में इतिहास में जो राजनीति पड़ा करते थे उसके उल्ट ही माजरा देश की नित नई बदलती राजनीति का देखा, सुना और उस से भी भयंकर रूप दिखा इसका रिश्तों में...ये सोच सोच रीना विफर जाती।दिलों पर, रिश्तों पर सियासी दाव पेच कितनी विचित्र सी बात है। पर आस पास यही तो देखने को मिल रहा है रिश्ते दिल से नहीं बस खिंचते नज़र आते हैं क्योंकि उनपर चश्मा चढ़ गया है सियासत का जिसके चलते द्वेष, तनाव, बनावट, झूठ खिंचतान ही नज़र आती है। यही हाल दोस्ती पर भी भारी हो चला है।

रीना अचानक चौंकी पहले तो सिर्फ अंग्रेजों ने फुट डाली, फिर चंद सियासी धारियों ने सत्ता के लिये और अब तो ये रंग हर जगह दिखने लगा है घर बाहर सब जगह। ऐसे कैसे कब तक चलेगो ये दुनिया झूठ बनाम राजनीति की बैसाखियों पर जहाँ सिर्फ दर्द,आँसू,सूनापन ही हो

फिर चाहे वो राजनीति देश की हो या दिलों की,रिश्तों की।

सीख बचपन की

सर्दियों की गुनगुनी धूप में सभी अपना अपना काम लिए धूप का मज़ा ले रहे थे। कोई सरसों,पालक, बथुआ छांट रहा था, कोई बुनाई, कोई अखबार, कोई होमवर्क, कोई सिर्फ आराम ऐसे में मीना खेलने को अपने रैकेट से पेड़ के पत्तों पर ज़ोर ज़ोर से वार कर रही थी। सबने कई बार रोका, टोका पर उसे तो जैसे एक खेल मिल गया था तो मीना कहाँ सुन रही थी। तभी अचानक ध्यान बटने से रैकेट पत्तों की जगह मीना की उंगलियों पर लग गया और वो ज़ोर ज़ोर से रोने लगी। तभी माँ उसकी नन्ही उंगलियों को सहलाते हुए बोली "देखो आपको एक बार लगा तो इतना दर्द हुआ और सोचो पत्तों और पेड़ को कितना दर्द हो रहा होगा आप उनको इतनी देर से मार रहे थे" डबडबायी आँखों से मीना ने माँ की बात सुनी और जैसे माँ उसकी उंगलियों को सहला रही थी वो जाकर अपराध बोध पत्तियों को सहलाने लगी और ये बचपन की सीख उम्र भर उसके साथ रही प्रकृति की छांव सी।

एक व्रत ऐसा भी

आकाश में देखो आज हो रहा चाँद से चाँदनी का भी कितना प्यारा मिलन और एक मेरा नसीब आज के दिन भी पति साथ नहीं सोच सोच बार जिया की आँखें भर आ रही थीं।

शादी के पन्द्रह सालों में ये पहला करवाचौथ का व्रत है जब मैं यूँ तन्हा हूँ,न मन में चहक,न उल्लास,न चाह सजने संवरने की,चूड़ियों की खनक, मेहंदी की महक, गजरे की खुश्बू सब फीकी पड़ गईं है आज इस तन्हाई में लिपट कर बस है तो आँखों में उदासी,इंतज़ार और आँसू।

कुछ भी तो भा नहीं रहा देख सभी जोड़ों को हँसते, खिलखिलाते, चहकते देख। क्यों चले गये तुम मुझ से यूँ दूर सोच ही रही थी की मोबाइल पर पति की फोटो देख सहज होने की जिया कोशिश करने लगी। आखिर नौकरी है इसमें दोष तो किसी का भी नहीं था। पति को फोन में और चाँद को आसमाँ में देख जिया ने व्रत खोला और चुपके से छुपा गयी अपना दर्द सारा।

शक

सुनील: उठो न जानू कब तक रूठी रहोगी।

सीमा: आपको क्या आप जाओ, मुझे मेरे हाल पर छोड़ दो।

सुनील: अरे ऐसे कैसे धर्म पत्नी जी आपको छोड़ दें शादी के सात फेरे लिए हैं, सात जन्मों का बंधन है।

सीमा: गुस्से से तमतमाते हुए, ये एहसास तब कहाँ चला जाता है जब भी आपको फोन करो। तब तो आपको बात करना भी गवारा नहीं होता।

सुनील: यार समझो करो ऑफिस में हज़ारों काम, हज़ारों उलझने होती हैं।

सीमा: हाँ हाँ पता है जैसे बस आप भी एक अलग नौकरी करते हो।

सुनील: रोज़ सुबह हो या शाम तुम्हारा तो एक ही रोना है।

सीमा: तो जाओ न फिर किस ने रोका है।

सुनील: यही ठीक है न तुम्हारे शक का कोई इलाज है न तुम्हारे दिमाग का।

सीमा : बिखरते हुए "हाँ हाँ जाओ न फिर अपनी ऑफिस की तितलियों के पास जो छोटे छोटे कपड़े डाल मंडराती रहती हैं।

सुनील: पैर पटकता हुआ आज भी बिना नाश्ता किए निकल जाता है।

सीमा: उठती है और रोने लगती है सोचते हुए आखिर हो क्या गया है

सुनील को, क्या मुझ से मन भर गया है। सोचते हुए वो फिर बिस्तर पर लेट गयी।

(तभी घंटी बजी और सामने कामवाली थी)

सीमा: गुस्से से कभी तो टाईम पर आ जाया करो, रोज़ ही अपनी मर्ज़ी से आती हो।

कामवाली : क्या करूँ भाभी आपके जैसे थोड़ी ज़िन्दगी है हमारी। रोज़ आदमी शराब पीकर मारता है, तमाशा होता है, कल रात तो घर से ही बाहर निकाल दिया। सारी रात बच्चों के साथ घर के बाहर बीती। सुबह जब उसका नशा उतरा तब

हम सब अंदर आये।
सीमा: पति है या जानवर।
कामवाली: अब जो भी हमारी और बच्चों की ज़िन्दगी तो उसी के साथ है,कहते हुए वो बर्तन माँजने लगी।
सीमा: अभी सोच में ही थी कि घण्टी बजी और कपड़े धोने वाली सामने थी।
सीमा: चौंकते हुए अरे ये हाथ और गाल पर चोट कैसी काजल (कपड़े धोने वाली)।
काजल: आँखोँ में आँसू और झेंपते हुए "क्या बताई" बस पति से रात में मना किये आज तबियत सही नहीं कह कर तो बस लात, घुसे, चपल, गाली गलौच "साली तेरा तो रोज़ का नाटक है ज़रा सा हाथ लगाते ही तेरी तबियत खराब होती है।शादी क्यों कि फिर जब इतनी ही दिक्कत थी।
सीमा: अब शादी का मतलब सिर्फ बदन लेना ही क्या?
काजल: क्या कही मैडम उसे तो शराब और बदन रोज़ ही चाहिये।
सीमा: उफ्फ ये इंसान हैं या भेड़िये। और दोनों की बातें सुन उसका सिर दर्द से फटने लगा। कैसी ज़िन्दगी है इनकी इतना दर्द जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।

यही सोचते सोचते दोनों का काम खत्म हो चुका था और सीमा उदास सी बैठी थी। तभी ड्राइंग रूम में लगी तस्वीरों पर नज़र गई। शादी से लेकर अब तक के पलों की तस्वीरें। दो प्यारे से बच्चे और सुनील जैसा पति जो उसे इतना प्यार और सम्मान देता है और मैं शक का बेसिर पैर का ताना बाना बनाये बैठी हूँ, ये सोच सोच मन आत्म ग्लानि से भरने लगा। पर आज के सबक से शक के बादल पूरी तरह छटने लगे एक नई सुबह नई शाम, नई ज़िन्दगी की डगर।

घाव दिल के

मीना के पड़ोसी यूँ तो दिखने में कितने सभ्य पड़े लिखे लगते थे। पति बैंक में पत्नी हॉस्पिटल में नर्स और तीन बच्चे दो लड़कियाँ, एक लड़का। बाहर से कोई भी देखता तो ये परिवार बड़ा ही खुशहाल और एकदम मॉडर्न सा लगता।
पर असलियत तो कुछ और ही थी

बूढ़ी माँ, दो बहनों पर अक्सर ही चिल्लाने, मार पीट, गाली गलौच की आवाज़ें साफ सुनाई देती थीं मीना के घर पर। कई बार तो माँ और बहनें दुहाई भी देतीं अपने पर हो रहे अत्याचार की। इतना भी काफी नहीं था उस दंपति के लिये छोटे भाई को मानसिकता का हवाला दे आगरा के पागलखाने में भर्ती करा दिया। आगे घर बेहद ही अच्छा सा रखा हुआ था और पीछे एक कोठरी नुमा कमरा माँ और बहनों के लिये।

कोई इतना जुल्म कैसे कर सकता है, क्या आत्मा धिक्कारती भी नहीं थी मीना का बाल मन ये सब सुन दहल सा ही जाता और अगर मीना के माँ बाप कुछ मदद कर देते माँ की खाने, दवा या पैसों से तो वो भी उनको गवारा न होता वो उन पर और जुल्म करते। ये सोच मीना का परिवार भी चुप ही रहने लगा ताकि उनपर उनकी वजह से और कहर न उठे। भाई ने पागलखाने में, माँ ने दर्द में दम तोड़ दिया और बहनें अपने दिल पर लगे कभी न मिटने वाले घावों को लेकर घर से चली गईं। पर समय की मार और हाय ने परिवार को भी नहीं छोड़ा और अपने हर वार की सज़ा मिली। सही कहते हैं ईश्वर की लाठी में आवाज़ नहीं होती और अपने किये का लेखा जोखा देर सवेर देना ही पड़ता है। पर इससे शरीर के दाग भले ही मिट जाएं मन के घाव तो सदा हरे ही रहते हैं।

अस्मत

रीना आज भी रोज़ की तरह कराहते हुए उठी क्योंकि हर रात की कहानी थी कभी रूहानी मार तो कभी जिस्मानी। अपनी दूध मुँह बच्ची को देख अक्सर सोचा करती "कैसे समय में आई ये मेरी कोख से,जब घर हो या बाहर हर ओर गिद्ध हैं मंडराते, नोच खाने को औरत की अस्मत"। न कोई उम्र का लिहाज़ न किसी रिश्ते का। कहीं भी तो महफ़ूज़ नहीं बेटियाँ।

तभी बच्ची की रोने की आवाज़ से उसकी गहरी सोच टूटी और उसे गोद में उठा छाती से लगा दूध पिलाने लगी। तभी पति चिल्लाया इसी का पेट भरती रहेगी या मुझे भी चाय नाश्ता देगी।

रीना बिटिया को दूध पिलाते पिलाते चाय और नाश्ता बनाने में लग गयी और पति अपने दंभ में चल पड़ा घर से बाहर। रीना ने भी बिटिया को गोद से उतार उसे लिटाया और घर के काम निपटाने लगी।

दोपहर होने का थी थोड़ा लेटे हुए समाचार लगाए तो फिर वही खबरें,..कभी एक शहर में तो कभी दूसरे इस तरह रोज़ ही घटनाएं बढ़ने लगी थीं रेप, गैंग रेप, तेज़ाब फेकने, अगवा, यौन शोषण की। समाज जहां सदियों से उबर ही नहीं पा रहा था भ्रूण हत्या से आज कैसे उभर पायेगा रोज़ हो रहे इस शोषण से सोचते सोचते रीना बेबसी से कभी खुद को देखती कभी बगल में लेटी अपनी बच्ची को जो बेखबर थी इन सब से।

मेहनत

अभी बचपन ठीक से खिला भी न था और घर में सबसे छोटा सबसे लाडला प्यार की बाहों में झूला भी न था की बंटवारे की लकीर ने सब कुछ छीन लिया माँ का आँचल, घर आँगन, भाई बहन, संगी साथी सब बिखर कर, झुलस कर रह गया बंटवारे की लकीर के पार।

अब कुछ बचा था पास तो बस धुँधली सी यादें, और पिता के जाने के बाद बिखरा परिवार। यही बस नसीब बन गया था नन्हे सुनील का जिसके पास न माँ की गोद थी न पिता का साया, न बहन का प्यार जो विदा हो अपने ससुराल में थी और न ही बंटवारे में बंटे चार भाई। था बस कुछ तो भूख, उदासी,बेबसी और लाचारी।

14 से 15 साल की उम्र तक अब बहुत हुआ सोच सुनील ने अपना नसीब खुद संवारने की ठानी और छोटे मोटे काम करते करते वो व्यापार के गुण सीख अपना खुद का काम करने का मन बनाया।

उम्र कच्ची थी पर हौंसला,लग्नऔर मेहनत बड़ी और यूँ धीरे धीरे वह कपड़े का व्यापारी बन गया। गली गली साइकिल पर बिना धूप, गर्मी, सर्दी, बरसात की परवाह किये वह अपने पैर जमाता गया।

आखिर किस्मत भी कब तक आज़माती और इम्तहान लेती ज़िन्दगी ने करवट ली एक भरा पूरा परिवार (पत्नी, दो बच्चे), अपना घर, अपनी दुकान सुनील को अपनी कड़ी मेहनत, लग्न, दृढ़ निष्ठा के ईनाम में मिली जिस से बचपन से खिंची लाचारी और बेबसी की काली लकीरें अब धुंधली सी पड़ने लगी थी और ज़िन्दगी मुस्कुराने लगी थी।

व्यक्तित्व दर्पण

नाम	- मीनाक्षी सुकुमारन
जन्मतिथि	- 18 सितम्बर 1967 (नई दिल्ली)
माता-पिता	- श्रीमती कान्ता वधवा - श्री बद्रीनाथ वधवा
पति	- श्री सी.एन.सुकुमारन
शिक्षा	- एम.ए. (हिन्दी), एम.ए. (इंग्लिश)
निवास स्थान	- डी.214, रेल नगर प्लाट नं. ए 1 सेक्टर 50, नोएडा (यु.पी.) 201301
फोन नं.	- 9810862418
मेल आई.डी.	- virgo67@ymail.com
संप्रति	- कवयित्री/लेखिका
विधा	- छंद मुक्त (स्वतंत्र भाव) कविता, कहानी, लघुकथा, संस्मरण, लेख आदि
रुचि	- कविता लिखना, पुराने गीत (लता, मुकेश, रफ़ी), जगजीत सिंह, पंकज उदास की गज़लें सुनना बेहद प्रिय है।
प्रकाशन	- निजी काव्य संकलन :- 1. भाव सरिता, 2. अहसास ऐ अल्फाज़, 3. बोलते एहसास 4. तड़प, 5. खामोशियाँ, 6. खामोश एहसास प्रकाशित। काव्य संग्रह 'तरंग' शीघ्र ही अवलोकित।
	- साँझा संग्रह :- 2014 से 2018 अब तक 39 काव्य संग्रह, 6 कहानी व 2 समीक्षा, 1 विचार मंथन संकलन प्रकाशित।
	- गुफ्तगू हिन्दुस्तानी साहित्य की त्रैमासिक पत्रिका एवं महिला विशेषांक-3 में 'परिशिष्ट'।
	- सृजन समीक्षा पुस्तिका (केन्द्रीय रचनाकार के रुप में हम पर केन्द्रित)
	- व्यक्तित्व कृतित्व जून विशेषांक टू मीडिया (राष्ट्रीय हिन्दी मासिक पत्रिका) लोकार्पित।
सम्मान/पुरस्कार	- साहित्य गरिमा 2014, साहित्य गौरव 2014, नारी गौरव 2015, काव्य गौरव 2015, माँ शारदे उत्कर्ष सम्मान 2015,दीपशिखा 2016, शब्द कलश 2016, साहित्य सम्मान 2016, युग सुरभि 2016, नारी सागर 2016, श्रेष्ठ शब्द शिल्पी 2016, राष्ट्रीय स्त्री शक्ति 2016, साहित्य गौरव आदि अनेकों सम्मान से सम्मानित।
	- विक्रमशिला हिन्दी विद्यापीठ द्वारा 'विद्यावचस्पति' उपाधि से सम्मानित।
	- स्पेशल जूरी अवार्ड 2018, डायमंड एचीवर अवार्ड 2018, सुभद्रा कुमारी चौहान सम्मान 2018
	- राष्ट्र गौरव अवार्ड 2018, राष्ट्रीय नारी गौरव अवार्ड 2018, भारतीय गौरव अवार्ड 2018,
	- द मीडिया साहित्य सम्मान 2018 एवं अनेंको सम्मान से सम्मानित।

अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com

१५, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी,
जि. बालाघाट (म.प्र.) पिन ४८१३३१,
संपर्क- ९४२४७६५२५९,
अणुडाक: antrashabdshakti@gmail.com

978-93-86666-59-8

मूल्य- 55/-